# मृच्छकटिक में गणिका जीवन

*डॉ. छगनलाल महोलिया

**प्रस्तावना –**

मानव आरम्भ से ही कलाप्रेमी रहा है। नृत्य, संगीत और वादन कलायें ऐसी हैं जिनकी ओर उसकी रुचि स्वाभाविक है। स्त्रियों का कण्ठ मधुर होता है फिर भी इस कला के लिये अभ्यास की आवश्यकता है।

वैश्या शब्द की व्युत्पत्ति है – वेशेन पण्ययोगेन जीवति इति वेश्या। यह शब्द गणिका, रण्डी अथवा बाजारू स्त्री के लिये प्रयुक्त होता है। याज्ञवल्क्य स्मृति में इसकी चर्चा आयी है।[1] इससे ज्ञात होता है कि स्मृतिकाल में भी स्त्रियों का एक निम्न वर्ग था जो धनी पुरुषों के मनोरंजन के लिये संगीत–वादन एवं नृत्यकला का प्रदर्शन करता था। आगे चलकर यही वर्ग आमोद–प्रमोद का साधन बन गया। वैश्या और गणिका में भी अन्तर समझा जाता है। वेश्यायें अपने रूप यौवन द्वारा धन कमाने वाली मानी जाती थीं तो गणिकायें विशेष रूप से गाने और नाचने की कला का ही प्रदर्शन करती थीं। इस विषय पर विशेष प्रकाश दशरूपक के टीकाकार ने डाला है। उन्होंने कहा है – वेशोभृतिः, सोऽस्या जीवनमिति वेश्या। चेद्विशेषो गणिका।[2] ऐसा प्रतीत होता है कि सामान्य वेश्याओं में श्रेष्ठ, रूप, शील और गुणों से युक्त वेश्या गणिका कही जाती थी। वर्तमान काल में ऐसा कोई विशेष वर्ग देखने में नहीं आता, अतः सब वेश्याएं कही जाती है। मृच्छकटिक की नायिका वसन्तसेना जन्म से गणिका है पर उसका आचरण कुलजा जैसा है। वह इस कर्म से घृणा करती है और अपना जीवन एक कुलीन सती नारी की तरह आर्य चारुदत्त से विवाह करके बिताना चाहती है।

मृच्छकटिक में अधिकतर वसन्तसेना के लिए गणिका शब्द का प्रयोग किया गया है। कुछ स्थानों पर ही उसे वैश्या कहा गया है। गणिका और वेश्याओं से सम्बन्ध समाज की दृष्टि में अच्छा नहीं माना जाता है। यही कारण है कि नवम अंक में न्यायाधीश चारुदत्ता से पूछते हैं – आर्य गणिका तव मित्रम् ? तो चारुदत्त लज्जित हो जाता है। अतः यह निश्चय है कि वेश्याओं को समाज में अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। विदूषक ने भी कहा है –

**'गणिआणाम पादुअन्तरप्पविट्टा विअ लेट्ठुआ दुक्खेण उण णिराकरीअदि।'**[3] मृ.क. (पं. अंक)

गणिका जूते में पड़ी हुई कंकड़ी के समान है जो बड़ी कठिनाई से निकाली जा सकती है।

मृच्दकटिककाल में गणिकाएं बड़ी सम्पन्न थीं। उनके अपने विशाल भवन थे जिनमें सुख–समृद्धि की सभी सामग्रियां उपलब्ध थीं। वे हाथी भी रखती थीं। विदूषक ने वसन्तसेना के दूसरे प्रकोष्ठ को देखते हुए कहा है –

**'इदो अ कूरच्चुअतेलमिस्सं पिण्डं हत्थीपडिच्छावीअदि मेत्थपुरिसेहिं।'**[4] मृ.क. (च. अंक)

इधर महावतों द्वारा भात से गिरे हुए तेल (लक्षणों से घी) से मिश्रित पिण्ड हाथी को खिलाया जा रहा है।

विदूषक ने वसन्तसेना के सातों प्रकोष्ठों को देखा और एक से एक सुन्दर एवं अद्भुत वस्तुओं को देखकर अवाक् रह गया और कहने लगा –

एव्वं वसन्तसेणाए बहुवुत्तन्तं अट्टपओट्ठं भवणं पेक्खिअ जं सच्चं जाणामि एकत्थं विअ तिविट्टअं विट्टम्।[5] मृ.क. (च.अं)

इस प्रकार वसन्तसेना के बहुत वृत्तान्त वाले मानव, पशु, पक्षी युक्त आठों प्रकोष्ठों को देखकर मुझे सचमुच विश्वास हो गया है कि मैंने एक ही जगह स्थित स्वर्ग, मर्त्य एवं पाताललोकमय त्रिभुवन को देख लिया है।

गणिका अथवा वेश्यावर्ग को यह सारा धन आमोद–प्रमोद में मस्त धनिक वर्ग से प्राप्त होता था। धनिकों का सारा धन अपहरण करके ये उनसे अपना सम्बन्ध समाप्त कर देती थी।

विदूषक ने भी कहा है –

**'अवमाणिद निद्धण कामुआ विअ गणिआ।'**[6] मृ.क. (प्र. अंक)

निर्धन कामुकों को अपमानित करने वाली वेश्या जैसी स्त्रियां निन्द्य है।

विट ने भी इस सम्बन्ध में वसन्तसेना से संभाषण करते हुए अपने मनोगत विचार व्यक्त किये हैं –

**तरुणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासो**

**विगणय गणिका त्वं मार्गजाता लतेव।**

**वहसि हि धनहार्यं पण्यभूतं शरीरं**

**सममुपचर भद्रे सुप्रियं चाप्रियं च।। मृ.क. (1–31)**

युवकों से सेवित वेश्यालय को स्मरण करो। पथ में उत्पन्न होने वाली लता के समान तुम अपने को समझो। बाजार में धन देकर खरीदी जाने वाली वस्तु के समान तुम देह चारण करती हो अतः रसिक और अरसिक दोनों के साथ समान व्यवहार करो।

और भी

**वाप्यां स्नाति विचक्षणो द्विजवरो मूर्खेऽपि वर्णाघमः,**

**फुल्लां नाम्यति वायसोऽपि हि लतां या नामिता बर्हिणा।**

**ब्रह्मक्षत्रविशस्तरन्ति च यया नादा तयैवेतरे,**

**त्वं वापीव लतेव नौरिव जनं वेश्यासि सर्वं भज।। मृ.क. (1–32)**

विद्वान् ब्राह्मण तथा नीच मूर्ख भी तालाब में स्नान करते हैं। जिस विकसित लता को मयूर ने झुकाया है उसी को कौआ भी झुकाता है। जिस नौका से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्या पार उतरते हैं उसी से शूद्र आदि भी पार होते हैं। तुम वेश्या हो और तालाब, लता तथा नौका के तुल्य हो, अतएव प्रत्येक मनुष्य का तुम समान आदर करो।

चारुदत्त ने भी कहा है –

**''यस्यार्थास्तस्य सा कान्ता धनहार्यो ह्यसौ जनः'। मृ.क. (5–9) पूर्वार्ध**

जिसकी सम्पत्ति है उसी की वह कामिनी है क्योंकि यह गणिका समुदाय तो धन के वशीभूत है।

सभ्य पुरुषों के गृहों में गणिकाओं के लिए प्रवेश की आज्ञा न थी। इससे वे मन ही मन अपना बड़ा अपमान करती थी। चारुदत्त द्वारा रदनिका के रूप में समझी जाने वाली वसन्तसेना ने स्वयं कहा है–

**मन्दभाइणी क्खु अहं तुम्हे अब्भन्तरस्स'।[7] मृ.क. (प्रथम अंक)**

तुम्हारे अंतःपुर के प्रवेश के लिए मैं मन्दभागिनी हूं।

कभी कभी अवांछित पुरुषों द्वारा ये गणिकायें और वेश्यायें बलात् बाधाओं और खतरों में भी पड़ जाती थीं। गणिकायें कलाओं में प्रवीण थीं। वसन्तसेना का चतुर्थ प्रकोष्ठ इसका प्रतीक है।

विट ने वसन्तसेना के स्वर–परिवर्तन को देखकर कहा है :–

**इयं रंगप्रवेशेन कलानां चोपशिक्षया।**

**वंचनापण्डितत्वेन स्वरनैपुण्यमाश्रिता।। मु.क. (1–22)**

इस वसन्तसेना ने नाट्यशाला में प्रवेश तथा कलाओं की शिक्षा के द्वारा दूसरों के ठगने की कुशलता के कारण स्वर–परिवर्तन में निपुणता प्राप्त कर ली है।

चारुदत्त ने भी गणिकाओं के पुरुषों के समक्ष बहुत बोलने की निन्दा करते हुए वसन्तसेना के विषय में कहा है –

**पुरुष परिचयेन च प्रगल्भं,**

**न वदति यद्यपि भाषते बहूनि। मृ.क. (1–56)**

यद्यपि यह गणिका है और बहुत बोलने वाली है तथापि मेरे जैसे पुरुषों की उपस्थिति में घृष्टता से नहीं बोलती है।

इसी से मिलता हुआ कथन वसन्तसेना का भी मदनिका के प्रति है –

**'हंजे ! किं वेसवास दाक्खिण्णेण मदणिए, एव्वं भणसि'।[8]** मृ.क. (च. अंक)

हे चेटि मदनिके ! क्या वेश्यालय में रहने से चातुर्य सीखने के कारण ऐसा कहती हो ?

मदनिका ने भी वसन्तसेना से ही इसका उत्तर ज्ञात किया है।

**'अज्जए ! किं जो ज्जेव जणो वेसे पठिवसदि, सो ज्जेव अलीअ दक्खिणो भोदि'।[9]** मृ.क. (च. अंक)

आर्ये क्या जो भी व्यक्ति वेश्यालय में रहता है वह असत्य बोलने में कुशल होता है।

वसन्तसेना ने भी क्या ही उत्तर दिया है।

**'हज्जे ! णाणापुरिससंगेण वेस्साजणो अलीअदक्खिणे भोदि।'[10]** मृ.क. (च.अ.)

चेटि ! विभिन्न पुरुषों के संसर्ग के कारण वेश्यायें असत्यपटु हो जाती है।

वेश्याओं के सम्बन्ध में जनसाधारण की ये धारणायें अवश्य थीं, पर गणिका वसन्तसेना इसका अपवाद थी। वह धन के आगे गुणों का मूल्य आंकती थी। धन का उसकी दृष्टि में कोई महत्व न था। विट द्वारा वेश्यावृत्ति से सम्बन्धित विवेचन सुनकर वसन्तसेना ने कहा है –

**'गुणो क्खु अणुराअस्स कारणम्, ण उण बलक्कारो।'**[11] मृ.क.(प्र.अं.)

प्रेम का वास्तविक कारण गुणव है न कि बलात्कार।

चारुदत्त ने भी इसका समर्थन किया है –

**'गुणहार्यो ह्यसौ जनः'।** मृ.क. (पं. अंक)

यह वसन्तसेना गुणद्वारा वश में करने योग्य है।

सच है वसन्तसेना ऐसी ही थी। उसने अपनी माता का यह संदेश पाकर कि राजा का साला संस्थानक दस हजार सुवर्ण के आभूषणों को देकर उसे ले जाने की प्रतीक्षा में है, अपनी माता से कहने के लिए उसने मुंह तोड़ उत्तर दिया है।

**'एव्वं विण्णाविदव्वा––जइ मं जीअन्तीं इच्छसि, ता एव्वं ण पुणे अहं अताए आण्णाविदव्वा।'**[12] **मृ.क. (च.अं.)**

यह कहना––यदि मुझे जीवित चाहती हो तो मुझे माताजी के द्वारा फिर आज्ञा न मिलनी चाहिये।

वेश्यावृत्ति से वसन्तसेना की कितनी घृणा थी यह इससे स्पष्ट हो जाता है। उसकी कुलवधू होने की दबी हुई लालसा उस समय स्पष्ट हो जाती है जब वह मदनिका को वधू रूप में शर्विलक के साथ सानन्द विदा करती है। वसन्तसेना ने मदनिका को गाड़ी पर चढ़ाते हुए कहा है –

**'संपदं तुमं ज्जेव वन्दणीआ संवुत्ता'**[13] मृ.क. (च. अंक)

अब तुम ही वन्दनीय हो गई हो।

कभी–कभी राजाओं की ओर से भी वेश्याओं को उनके अच्छे गुणों के कारण कुलवधू की प्रेरणा मिलती थी और तब वे अपने इच्छानुसार नियमानुकूल विवाह कर सकती थीं।

शर्विलक ने वसन्तसेना से यही व्यक्त किया है –

**'आर्ये वसन्तसेने, परितुष्टो राजा भवतीं वधूशब्देनानुगृह्लाति।'**

आर्ये वसन्तसेना, प्रसन्न हुए राजा आपको वधूशब्द से अनुगृहीत करते हैं।

**निष्कर्ष –**

मृच्छकटिककार ने इस प्रकरण में वैश्याओं की समृद्धि अवश्य दिखाई है पर साथ ही तत्कालीन वेश्यावर्ग समाज की दृष्टि में हीन जीवन बिताने की अपेक्षा विवाहित जीवन बिताकर कुलवधू के रूप में मान्यता देता था। मनोरंजन एवं

नाट्यसंगीत का माध्यम तो ये चिरकाल से रही है। उच्चकोटि के आदर्श स्वस्थ समाज में ही, वेश्यावृत्ति की समाप्ति कदाचित् सम्भव है।

***व्याख्याता**
**संस्कृत विभाग**
**राजकीय महाविद्यालय, गुडामालानी (बाड़मेर)**

**संदर्भ –**

1. याज्ञवल्क्यस्मृति 1/141
2. दशरूपक
3. गणिका नाम पादुकान्तरप्रविष्टेव लेष्टुका दुःखेन पुनर्निराक्रियते। (स.अनु.)
4. इतश्च क्रूरच्युततैलमिश्रं पिण्डं हस्ती प्रतिग्राह्यते मात्रपुरुषैः। (स.अनु.)
5. एवं वसन्तसेनाया बहुवृत्तान्तमष्टप्रकोष्ठं भवनं प्रेक्ष्य यत्सत्यं जानामि एकस्थमिव विविष्टयं दृष्टम्। (सं. अनु.)
6. अपमानिता निर्धनकामुका इव गणिका। (सं.अनु.)
7. मन्दभागिनी खल्वहं तवाभ्यन्तरस्य। (सं.अनु.)
8. चेटि ! किं वेशवासदाक्षिण्येन मदनिके एवं भणसि। (सं.अनु.)
9. आर्ये ! किं य एव जनो वेशे प्रतिवसति, स एवालीकदक्षिणो भवति। (सं.अनु.)
10. चेटि ! नानापुरुषसंगेन वेश्याजनोऽलीकदक्षिणो भवति। (सं. अनु.)
11. गुणः खल्वनुरागस्य कारणम्, न पुनर्बलात्कारः। (सं.अनु.)
12. एवं विज्ञापयितव्या–यदि मां जीवन्तीमिच्छसि, तदैवं न पुनरहं मात्राऽऽ–ज्ञापयितव्या। (सं.अनु.)
13. सांप्रतं त्वमेव वन्दनीया संवृत्ता। (सं.अनु.)